# निवेदन

मैंने श्रीमत्स्वामि दयानन्दसरस्वतीजी का जो कुछ चर्चा देश देशान्तरों में सुना मन में आया कि जैसे किसी समय में विष्णु भगवान् ने वेदोद्धार किया बतलाते हैं कदाचित् फिर भी इस कलिकाल में उसी लिये दयानन्दजी ने अवतार लियाहो दैव-संयोग से एक दिन मैं किसी मेम ( १ ) और साहिब के देखने को गया था तो वहां उस बाग़ में पहले दयानन्दजी महाराजही का दर्शन हुआ मैंने जिज्ञासा की कुछ उपदेश चाहा प्रश्नोत्तर पूरे नहीं भये साहिब आगये और और बातें होनेलगीं मैं घर आया पर जितना महाराजजी के मुखारविन्द से सुना था बड़े सन्देहका कारण हुआ निवृत्त्यर्थ पत्रलिखा महाराज जी नें कृपा करके उत्तर दिया उसे देख मेरा सन्देह और भी बढ़ा महाराजजी के लिखने अनुसार ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका मँगा के पृष्ठ ६ से ८८ तक देखा विचित्र लीला दिखाई दी आधे आधे वचन जो अपने अनुकूल पाये ग्रहण किये हैं और शेषार्ध का जो प्रतिकूल पाये परित्याग उन आधे अनुकूल में भी जो कोई शब्द अपने भाव से विरुद्ध देखे उनके अर्थ पलटदिये मनमाने लगालिये घबराया कि छापेकी अशु-

---

( १ ) जगत् विख्यात मादम ब्लवत्स्की और कर्नल ओल्काट ॥

छ्ता है वा मेरी समझ और आंखों का दोष फिर पत्र लिखा उसका जो उत्तर पाया तो जाट और खाट और मुगल और कोल्हू की कहावत याद आयी श्रीमत्पण्डितवर बालशास्त्रीजी तो बाहर गये हैं परम पूजनीय जगत्गुरु श्री स्वामी विशुद्धानन्दजी के चरणों में पहुंचा पत्र और उत्तरों को देखकर बहुत हँसे और पिछले उत्तर पर जिसमें इन दोनों महात्माओं का नाम है कुछ लिखवा भी दिया अब मैं महा विकट विस्मयावर्त्त में पड़ाहूं न तो यह कह सक्ताहूं कि स्वामी दयानन्दजी संस्कृत शब्दों का अर्थ नहीं समझते और न यह अपने मन में लासक्ताहूं कि आप तो समझते हैं दूसरों के बहकाने और भुलाने को यह अर्थाभास रचा है क्योंकि ऐसा काम सत्पुरुषों का नहीं है जो हो मैंने अपने पत्र और स्वामी दयानन्द जीके उत्तरों का इसमें छपवा देना बहुत उचित समझा कि जो सज्जन आर्य लोग उनकी बनायी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका देखते हैं अपनी बुद्धि को कुछ काम में लावें और दूसरे पण्डितोंसे भी सम्मति लेवें ऐसा न हो कि अंधेनैव नीयमाना यथान्धाः के सदृश केवल दयानन्दजी के भाष्य और भूमिका ही की लाठी थामे किसी अथाह गढ़े वा नरककुण्ड में जा गिरें क्योंकि किसी पारसी कवि ने कहा है -

اگر بینم که نا بینا و چاهست و گر خاموش بنشینم گناهست

इत्यलम् किमधिकम् ॥

## मेरा पहला पत्र।

काशी संवत् १९३७ चैत्र शुक्ला ११
श्री ५ मत्स्वामि दयानन्द सरस्वतीभ्यो नमोनमः
जब दर्शन पाया कुछ बात हुई अधूरी रह गयी इच्छा थी फिर दर्शन करूं बन नहीं पड़ा अब सुना आप बाहर पधारने वाले हैं इसलिये उस दिन के अपने प्रश्न और आपके उत्तर अपने स्मरणानुसार नीचे लिखताहूं यदि भूल हो आप सुधार दें आगे भी कृपा करके इसी पत्र पर कुछ उत्तर लिख भेजें

| मेरा प्रश्न | स्वामीजी महाराजका उत्तर |
| --- | --- |
| १ आपका मत क्याहै ? | १ हम केवल वेदकी संहिता-मात्र मानते हैं एक ईशा-वास्य उपनिषद संहिता है और सब उपनिषद ब्राह्मण हैं ब्राह्मण हम कोई नहीं मानते सिवाय संहिता के हम और कुछ नहीं मानते। |
| २ यदि वादी कहे कि वेद के ब्राह्मण नहीं मानते तो हम वेद की संहिता नहीं मानते तो आप संहिता के मण्डन और | २ संहिता स्वयं प्रकाश है आप अनुभव सिद्ध है। |

ब्राह्मण के खंडन का ऐसा प्रमाण दीजिये जिस से ब्राह्मण का मंडन और संहिता का खंडन न होसके वादी को आप अपना प्रतिध्वनि समझिये प्रमाण चाहे ४ मानिये चाहे ६ चाहे ८ चाहे सहस्रों सिवाय शाब्दके और सब का सहारा प्रत्यक्ष है सो इसमें प्रत्यक्ष होसकेगा नहीं और शाब्द जो आपने ब्राह्मणही को नहीं माना तो दूसरा कहां से लाइयेगा केवल आपके कहने से कोई कुछ क्यों मान लेगा ?

२ वादी कहता है कि ब्राह्मण स्वयं प्रकाश और अनुभव सिद्ध हैं ?

आपका दास शिवप्रसाद

## स्वामीदयानन्दजीका उत्तर

॥ ओ३म् ॥

संवत् १९३७ चैत शुदी १२ गुरुवार। राजा शिवप्रसादजी आनन्दित रहो आप का चैत शुक्ला ११ बुधवार का लिखा पत्र मेरे पास आया देखि के आप का अभिप्राय विदित हुआ उस दिन आप से और मुझ से परस्पर जो २ बातें हुई थीं तब आप को अवकाश कम होने से मैं न पूरी बात कह सका और न आप पूरी बात सुन सके क्योंकि आप उन साहबों से मिलने को आये थे आप का वही मुख्य प्रयोजन था पश्चात् मेरा और आप का कभी समागम न हुआ जो कि मेरी और आप की बातें उस विषय में परस्पर होतीं अब मैं आठ दश दिनों में पश्चिमको जाने वाला हूं इतने समय में जो आप को अवकाश होसके तो मुझ से मिलिये फिर भी बात होसक्ती है और मैं भी आप को मिलता परन्तु अब मुझ को अवकाश कुछ भी नहीं है इस से मैं आप से नहीं मिलि सकूंगा क्योंकि जैसा सन्मुख में परस्पर बातें होकर शीघ्र सिद्धान्त होसक्ता है वैसा लेख से नहीं इसमें बहुत काल की अपेक्षा है।

| आपका प्रश्न | मेरा उत्तर |
|---|---|
| १ आप का मत क्या है | १ वैदिक |

२ आप वेद किसको मानते हैं — २ संहिताओं को

३ क्या उपनिषदों को वेद नहीं मानते — ३ मैं वेदों में एक ईशावास्य को छोड़के अन्य उपनिषदों को नहीं मानता किन्तु अन्य सब उपनिषद ब्राह्मण ग्रन्थों में हैं वे ईश्वरोक्त नहीं हैं

४ क्या आप ब्राह्मण पुस्तकोंको वेद नहीं मानते — ४ नहीं क्योंकि जो ईश्वरोक्त है वही वेद होताहै जीवोक्त नहीं जितने ब्राह्मण ग्रन्थ हैं वे सब ऋषि मुनि प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत है जैसा ईश्वरके सर्वज्ञ होनेसे तदुक्त निर्भ्रान्त सत्य और मतके साथ स्वीकार करने के योग्य होताहै वैसा जीवोक्त नहीं होसक्ता क्योंकि वे सर्वज्ञ नहीं परन्तु जो २ वेदानुकूल ब्राह्मण ग्रन्थ हैं उनको मैं मानता और विरुद्धार्थों को नहीं मानता

हूं वेद स्वतः प्रमाण और
ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं
इससे जैसे वेदविरुद्ध ब्रा-
ह्मण ग्रन्थों का त्याग होता
है वैसे ब्राह्मण ग्रन्थों से
विरुद्धार्थ होनेपर भी वेदोंका
परित्याग कभी नहीं होसक्ता
क्योंकि वेद सर्वथा सबको
माननीय ही हैं.

अब रहगया यह विचार कि जैसा संहिताही को ईश्वरोक्त निर्भ्रान्त सत्य वेद मानना होता है वैसा ब्राह्मण ग्रन्थों को नहीं इसका उत्तर मेरी बनाई ऋग्वेदादि भाष्य भूमिकाके नवमें पृष्ठ से ६ लेके ८८ अट्ठासी के पृष्ठ तक वेदोत्पत्ति, वेदों का नित्यत्व, और वेद संज्ञाविचार विषयों को देख लीजिये वहां मैं जिसको जैसा मानता हूं सब लिखरक्खा है इसी को बिचारपूर्वक देखनेसे सब निश्चय आपको होगा कि इन विषयों में जैसा मेरा सिद्धान्त है वैसाही जानि लीजियेगा ॥

( दयानन्दसरस्वती )
। काशी ।

# मेरा दूसरा पत्र

श्री काशी वाराणसी संवत् १६३७ चैत्रशुक्ला पूर्णिमा
श्री ५ मत्स्वामि दयानन्द सरस्वतीभ्यो नमो नमः

आप का कृपापत्र चैत्रशुक्ला १२ का पा अत्यन्त कृतार्थ हुआ ग्रीष्म का प्रचंड उत्ताप अवकाश नहीं देता कि आपके दर्शनानन्द से मन ठंढा करूं तब तक आप कृपा करके पत्र द्वारा मेरे मनको सन्देह के ताप से बचावें ॥

आपने लिखा "ब्राह्मण ग्रन्थ + सब ऋषि मुनि प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत है" वादी कहता है जो "संहिता ईश्वर प्रणीत है" तो ब्राह्मणभी ईश्वर प्रणीत है और जो "ब्राह्मण ग्रन्थ + सब ऋषि मुनि प्रणीत" है तो संहिता भी ऋषि मुनि प्रणीत है आपने लिखा "वेद ( संहिता ) स्वतः प्रमाण और ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं" वादी कहता है जो ऐसा तो ब्राह्मणही स्वतः प्रमाण है आपका संहिता परतः प्रमाण होगा ( २ ) आपने प्रमाण ऐसा कोई दिया नहीं ( ३ ) जिस्से जिज्ञासू की तुष्टि

---

( २ ) मैं अपने पहले पत्रमें लिखचुका हूं कि "वादी को आप अपना प्रतिध्वनि समझिये" ॥

( ३ ) स्वामीजी महाराज प्रमाण कुछ भी नहीं देते जो आप अपने मनमानी कह देते हैं उसीको चाहते हैं कि लोग विधाता का लेख जानें ॥

प्रश्न की पूर्ति और सिद्धान्त की आशा हो आपने लिखा कि "मेरी बनायी हुई ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के नवमें पृष्ठ से ( ९ लेके ८८ ) अट्ठासी के पृष्ठ तक वेदोत्पत्ति वेदोंका नित्यत्व और वेद संज्ञा विचार विषयों को देख लीजिये" "निश्चय + होगा" सो महाराज "निश्चय" के पलटे में तो और भी भ्रान्ति में पड़गया मुझे तो इतनाही प्रमाण चाहिये कि आपने संहिता को "माननीय" मानकर ब्राह्मण का क्यों "परित्याग" किया और वादी तो संहिता जैसा ब्राह्मणको वेद मान जो आपने "वेद" के अनुकूल लिखा अपने अनुकूल और जो कुछ ब्राह्मण के प्रतिकूल लिखा उसे संहिता के भी प्रतिकूल समझता है तो भी मैंने आपकी "भाष्य भूमिका" मँगा के देखी पर उसमें क्या देखता हूं कि पहलेही ( पृष्ठ ९ पंक्ति ८ ) लिखा है "तस्माद्यज्ञात् + + + अजायत" अर्थात् उस यज्ञसे ( वेद ) उत्पन्न हुए पृष्ठ १० पंक्ति २९ में आप शतपथ आदि ब्राह्मणका प्रमाण देकर यह सिद्ध करते हैं कि यज्ञ विष्णु और विष्णु परमेश्वर (४) और फिर पृष्ठ ११ पंक्ति १२ में आप यह

(४) कैसा आश्चर्य है कि आपही तो संहिताको "स्वतःप्रमाण" और ब्राह्मण को "परतःप्रमाण" लिखते हैं और फिर आपही संहिता के "ईश्वरप्रणीत" होने के लिये "परतःप्रमाण" शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण देते हैं जैसे किसी मुद्दई का गवाह गवाही दे

लिखते हैं कि "याज्ञवल्क्य महाविद्वान् जो महर्षि हुए हैं अपनी पंडिता मैत्रेयी स्त्री को उपदेश करते हैं कि हे मैत्रेयि जो आकाशादि से भी बड़ा सर्व व्यापक परमेश्वर है उससे ही ऋक् यजुः साम और अथर्व ये चारों वेद उत्पन्न हुए हैं" परन्तु आपने याज्ञवल्क्यजी का यह वाक्य आधाही अपना उपयोगी समझ क्यों लिखा क्या इसीलिये कि शेषार्द्ध वादी का उपयोगी है ? वाक्य तो यही हैः—एवंवा अरेऽस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वांगिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि व्याख्यानानीष्टगं हुतमाशितं पायितमयंच लोकः परश्च लोकः सर्वाणिच भूतान्यस्यैवै तानि सर्वाणि निश्वसितानि अर्थात् अरी मैत्रेयि इस महाभूत के यह ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद इतिहास पुराण विद्या उपनिषद् श्लोक सूत्र अनुव्याख्या व्याख्या इष्ट हुत खाया पीया यह लोक परलोक सब भूत

---

कि मुद्दई का तमस्सुक सच्चा है पर मुद्दाअलेह की रसीद भी सच्ची है रुपया चुक गया और मुद्दई कहे कि गवाह झूठा है भरोसे के योग्य नहीं परन्तु अपना तमस्सुक ठीक होने के प्रमाण में उसी गवाह को आगे लावे अथवा जब हाकिम प्रमाण ( सबूत ) मांगे तो कहे मैं कहता न हूं मेरा दावा सच्चा है !

सब निश्वसित हैं ( ५ ) मुझे इस समय और कुछ तर्क वितर्क आवश्यक नहीं इतना कहना अलम् कि आपके इस प्रमाण से तो कि जो बृहदारण्यक ब्राह्मण का है जैसे वेद ईश्वर प्रणीत हैं वैसे ही उपनिषदादि सब ईश्वर प्रणीत हैं यदि इसका अर्थ यह कीजियेगा कि उपनिषद् जीव प्रणीत है तो आपका चारों वेद भी वैसाही जीव प्रणीत ठहर जायगा आपने संहिता स्वतः प्रमाण और ब्राह्मण को परतः प्रमाण लिखा और फिर संहिता के स्वतः प्रमाण सिद्ध करने को उन्हीं परतः प्रमाण ब्राह्मणों का आप प्रमाण लातेहैं सो इस व्याघात से छुटने के लिये यदि कुछ उत्तर हो आप कृपा करके शीघ्र लिख भेजें तब तक मैं आपकी भाष्य भूमिका आगे नहीं देखूंगा पृष्ठों को कुछ उलट पुलट किया तो विचित्र लीला दिखाई देती है आप पृष्ठ ८१ पंक्ति ३ में लिखते हैं "कात्यायन ऋषि ने कहा है कि मंत्र और ब्राह्मण ग्रन्थों का नाम वेद है" पृष्ठ ५२ में लिखतेहैं प्रमाण ८ हैं और फिर पृष्ठ ५३ में लिखते हैं

---

( ५ ) यह तो बड़ी हँसी की बात है कि स्वामीजी महाराजने जिस वचन को संहिता "ईश्वर प्रणीत" होने के लिये प्रमाण दिया है उसमें से चारों वेद का नाम तो लेलिया और वेदों के आगे जो उपनिषदादि का नाम लिखा है उसे सम्पूर्ण छोड़ दिया मानो यह समझा कि हमारे सिवाय किसी ने बृहदारण्यक उपनिषद् देखाही नहीं है ॥

चौथा शाब्द प्रमाण " आप्तों के उपदेश " पांचवां ऐतिह्य "सत्यवादी विद्वानों के कहे वा लिखे उपदेश" तो आपके निकट कात्यायन ऋषि " आप्त " और " सत्यवादी विद्वान् " नहीं थे ( ६ ) पृष्ठ ८२ में आप लिखते हैं कि ब्राह्मण में जमदग्नि कश्यप इत्यादि जो लिखे हैं सो देहधारी हैं अतएव वह वेद नहीं और संहिता में शतपथ ब्राह्मण (!) के अनुसार जमदग्नि का अर्थ चक्षु और कश्यप का अर्थ प्राण है अतएव वेद है (!!) फिर आप उसी पृष्ठ में लिखते हैं कि " ब्राह्मणानीतिहासान्पुराणानिकल्पान् गाथानाराशंसीः " ( ७ ) " इस वचन में ब्राह्मणानि संज्ञी और इतिहासादि संज्ञा है " तो इस युक्तिसे बृहदारण्यक का वचन जो मैंने ऊपर लिखा है उसमें भी क्या उपनिषद् संज्ञी और इतिहास पुराणादि संज्ञा है अथवा ऋग्वेदादि क्रमानुसार उनका संज्ञी वा संज्ञा है ? पृष्ठ ८८ पंक्ति १२ में आप लिखते हैं कि "ब्राह्मण + + +

---

( ६ ) भाई ! आपही कहो कि कात्यायन ऋषिजीको झूठ बोलने का क्या प्रयोजन था क्या कोई उनका भी मुकद्दमा किसी अंग-रेज़ी अदालत वा कचहरी में पेश था भला वह झूठ लिखते तो उनके सहकाली लोग उसे कब चलने देते पर जो हो दयानन्दजी ने कात्यायनजीको झूठा बनाया तो मैं पूंछताहूं कि जब कात्यायनजी ही झूठे ठहरे तो अब दयानन्दजी की बात योंही कौन मान लेगा ?

( ७ ) इसका अर्थ बहुत स्पष्टहै अर्थात् ब्राह्मण ( और ) इतिहास ( और ) पुराण ( और ) कल्प ( और ) गाथा ( और ) नाराशंसी

वेदोंके अनुकूल होनेसे प्रमाण के योग्य तो हैं" यदि आप इतना और मान लें कि सम्पूर्ण ब्राह्मणों का प्रमाण संहिता के प्रमाण के तुल्य है अथवा पृष्ठ ४२ पंक्ति ७ में आप लिखते हैं "तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेद शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषामिति अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते" इसका अर्थ सीधा सीधा यह मान लेवें कि आप के चारों वेद और उनके छओं अंग "अपरा" हैं जो "परा" उससे अक्षर में अधिगमन होता है अपना फिरवट का अर्थ वा अर्थाभास छोड़दें (८) तो बड़ा अनुग्रह हो मेरा सारा परिश्रम सफल होजावे और आपके दर्शन का उत्साह बढ़े किमधिकमित्यलम् । आपका दास शिवप्रसाद

---

परन्तु स्वामीजी महाराज ने पहले (और) की जगह (अर्थात्) कल्पना कर लिया अर्थात् ब्राह्मण अर्थात् इतिहास पुराणादि !

(८) स्वामीजी महाराज अपनी भाष्य भूमिका में पृष्ठ ४२ पंक्ति ७ इस के अर्थ यों लिखते हैं "(तत्रापरा०) वेदों में दो विद्या हैं एक अपरा दूसरी परा इन में से अपरा यह है कि जिससे पृथिवी और तृण से लेके प्रकृति पर्यन्त पदार्थों के गुणों के ज्ञान से ठीक ठीक कार्य सिद्ध करना होता है और दूसरी परा कि जिस से सर्वशक्तिमान् ब्रह्म की यथावत् प्राप्ति होती है यह परा विद्या अपरा विद्यासे अत्यन्त उत्तम है क्योंकि अपराकाही उत्तम फल परा विद्या है" निदान स्वामीजी महाराज ने इतना तो लिखा परन्तु सीधा अर्थ वा आशय नहीं लिखा कि चारोवेद (संहिता) और उनके छओं अंग अपरा है परा उनके सिवाय अर्थात् उपनिपद् है ॥

## स्वामी दयानन्दजी का पिछला उत्तर ॥

राजा शिवप्रसादजी आनन्दित रहो आप का पत्र मेरे पास आया देख कर अभिप्राय जान लिया इस से मुझ को निश्चित हुआ कि आप ने वेदों से लेके पूर्व मीमांसा ( ६ ) पर्यन्त विद्या पुस्तकों के मध्य में से किसी भी पुस्तक के शब्दार्थ सम्बन्धों को जाना नहीं है इसलिये आप को मेरी बनाई भूमिका का अर्थ भी ठीक २ विदित न हुआ जो आप मेरे पास आके समझते तो कुछ समझ सकते परन्तु जो आप को अपने प्रश्नों के प्रत्युत्तर सुननेकी इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती वा बालशास्त्री जी को खड़ा करके ( १० ) सुनियेगा तोभी आप कुछ २ समझलेंगे क्योंकि वे आपको समझावेंगे तो कुछ आशा है समझ जायँगे भला विचार तो कीजिये कि आप उन पुस्तकों के पढ़े विना वेद और ब्राह्मण पुस्तकों का

---

( ६ ) जान पड़ता है कि स्वामीजी महाराजने पूर्वमीमांसाही तक देखा है उत्तर मीमांसा नहीं देखा नहीं तो ऐसा न लिखते ॥

( १० ) तो जहां जहां जिसके जिसके पास भाष्य भूमिका जाताहै सबके पास स्वामी विशुद्धानन्दजी और पंडित बालशास्त्री जी को जाना चाहिये अथवा उन सबको समझने के लिये दयानन्दजी के पास आना चाहिये ॥

कैसा आपस में संबन्ध क्या २ उनमें हैं और स्वतः प्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परतः प्रमाण और ऋषि मुनि कृत ब्राह्मण पुस्तक हैं इन हेतुओं से क्या २ सिद्धान्त सिद्ध होते और ऐसे हुए विना क्या २ हानि होती है इन विद्यारहस्य की बातों को जाने विना आप कभी नहीं समझ सकें ॥ सं० १९३७ मि० वै० ब० सप्तमी शनिवार (दयानन्दसरस्वती)

(स्वामी विशुद्धानन्दजी का लिखवाया) राजा साहिब के प्रश्नों का उत्तर दयानन्द से नहीं बना ! ॥

इति ॥

दूसरा वा पिछला

## निवेदन

( अब इस विषय में आगे कुछ नहीं लिखा जायगा )

एक पुस्तक भ्रमोच्छेदन नाम मेरे "निवेदन के उत्तर में" श्रीमत्स्वामि दयानन्द सरस्वतीजी का निर्माण किया हुआ आया समझा कि अब अवश्य स्वामी जी महाराज ने यथा नाम तथा गुणः दया करके मेरे प्रश्न का उत्तर भेजा होगा बड़े उत्साह से खोल के देखा तो शिवप्रसाद कम समझ, आलस्यी, उसको संस्कृत विद्या में शब्दार्थ सम्बन्धों के समझने की सामर्थ्य नहीं, वह अयोग्य, उसकी समझ अति छोटी, वह अविद्वान्, अधर्म कर्मसे युक्त, अनधिकारी, उसके नेत्र फूट गये हैं, उसकी अल्प समझ, वह श्वान के समान, जैसी उसकी समझ वैसी किसी छोटे विद्यार्थी की भी नहीं, उसकी उलटी समझ, वह प्रमत्त अर्थात् पागल, उसको वाक्य का बोध नहीं, वह अन्धानां मध्ये काणो राजा, तात्पर्यार्थ ज्ञानशून्य, पक्षपातान्धकार से विचार शून्य, अशास्त्रवित्, अव्युत्पन्न, व्यर्थ वैतण्डिक, अन्धा, उसकी मिथ्या आडम्बर युक्त लड़कपन की बात, वह वादके लक्षण युक्त नहीं उसकी बुद्धि और आंखें अंधकारा-

वृत्त, वह सन्निपाती, वह कोदों देके पढ़ा, वह अविद्या-युक्त, बालक, बधिर, विचारा संस्कृत विद्या पढ़ाही नहीं, ऐसे ऐसे शब्द और वाक्यों से परिपूर्ण पाया खेदकी बातहै क्यों वृथा इतना कागज़ बिगाड़ा मैं तो आपही अपने को बड़ा बेसमझ बड़ा अविद्वान् बड़ा अधर्मी बड़ा अशास्त्रवित् बड़ा अव्युत्पन्न बड़ा अंधा पहलेसे मानेहुये हूं यदि इनकी जगह राम नाम लिखा होता कदाचित् कुछ पुण्यभी होसकता ( राम राम ) मेरे शिरपर जाट खाट और कोल्हू चढ़ाया है ( भ्रमोच्छेदन पृष्ठ १० ) ( Thanks ) पर मैं तो पहाड़ का भी बोझ सहसकता हूं हां मुझको छली और कपटी जो लिखा है उसका कारण कुछ समझमें नहीं आया यदि कहें कि जो जैसा होताहै वैसाही दूसरोंकोभी समझता है तो ऐसी बात मनमें लाने के भी पापका भागी मैं नहीं हुआ चाहता जो हो मैं तो अपने प्रश्नका उत्तर देखनेको विह्वल था प्रश्न मेरा एकही इतना कि "आपने लिखा 'ब्राह्मण ग्रन्थ सब ऋषि मुनि प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत है' वादी कहताहै जो 'संहिता ईश्वर प्रणीत है' तो ब्राह्मण भी ईश्वर प्रणीत है और जो 'ब्राह्मण ग्रन्थ सब ऋषि मुनि प्रणीत' है तो संहिताभी ऋषि मुनि प्रणीत है आप ने लिखा वेद ( संहिता मात्र ) स्वतः प्रमाण और ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं, वादी कहता है जो ऐसा तो ब्राह्मण

ही स्वतः प्रमाण है आप का संहिता परतः प्रमाण होगा ( निवेदन पृष्ठ ८ ) "आप संहिता के मण्डन और ब्राह्मण के खण्डन का ऐसा प्रमाण दीजिये जिस से ब्राह्मण का मंडन और संहिता का खण्डन न होसके केवल आप के कहने से कोई कुछ क्यों मान लेगा" ( नि० पृष्ठ ५ ) निदान भ्रमोच्छेदन की बाईसों पृष्ठें बाईस बार उलट डालीं इसके सिवाय उसमें और कुछ उत्तर नहीं पाया कि "देखिये राजाजी की मिथ्या आडम्बर युक्त लड़कपन की बात को जैसे कोई कहे कि जो पृथिवी और सूर्य ईश्वर के बनाये हैं तो घड़ा और दीप भी ईश्वर ने रचे हैं" और "जो सूर्य्य और दीप स्वतः प्रकाशमान हैं तो घटपटादि भी स्वतः प्रकाशमान हैं" ( भ्र० पृष्ठ १२ और १३ ) भला सूर्य और घड़े की उपमा संहिता और ब्राह्मण में क्योंकर घट सकेगी उधर सूर्य के सामने कोई आध घंटे भी आंख खोल के देखता रहे अंधा नहीं तो चक्षु रोग से अवश्य पीड़ित होवे जेठ की धूप में नंगे शिर बैठे सन्निपाती नहीं तो ज्वरग्रस्त अवश्य होजावे यदि अग्न्युत्तेजक काच सामने धर दे कपड़ा लत्ताही जल जावे जनम भर उछले कूदे कैसे ही बलून पर चढ़े कभी सूर्य तक न पहुंचे इधर कुम्हार से यदि चाक डंडा और कुछ मिट्टी लेआवे चाहे जितने घड़े आप अपने हाथ बना लेवे और फिर जब

चाहे तोड़ डाले संहिता और ब्राह्मण दोनों ग्रन्थ हैं एक से कागज पर एक सी सियाही से लिखे हुए वा छपे हुए और एक से कपड़ों में बंधेहुए जब तक बतलाया न जावे जानना भी कठिन कि कौन संहिता है और कौन ब्राह्मण पर हां उस काल से लेकर कि जिससे पहले किसी को कुछ विदित नहीं आजतक सब वैदिक हिन्दू अर्थात् जो हिन्दू वेद को मानते हैं संहिता और ब्राह्मण दोनोंको बराबर माननीय मानते चले आये स्वामीजी महाराज को अपने ही इस न्याय से कि "जो सैकड़ों आप्त ऋषियों को छोड़ कर एक ही को आप्त मान कर, संतुष्ट रहता है वह कभी विद्वान् नहीं कहा जा सक्ता" (अ० पृष्ठ १५) ब्राह्मण का परित्याग न करना चाहिये आपस्तम्बादि मुनि-प्रणीत सूत्रों के परिभाषा सूत्र में भी "मंत्र ब्राह्मणयोर्वेद नामधेयम्" ऐसाही लिखा है और स्वामी जी महाराज जो यह कहते हैं कि "क्या आप जैसा कात्यायन को आप्त मानते हैं वैसा पाणिनि आदि ऋषियों को आप्त नहीं मानते + + + जो उन को भी आप्त मानते हो तो मंत्र संहिता ही वेद है उन के इस वचन को मान कर तद्विरुद्ध ब्राह्मण को वेद संज्ञा के प्रतिपादक वचन को क्यों नहीं छोड़ देते" (अ० पृष्ठ १५) सो पहले तो स्वामी जी महाराज यह बतलावें कि पाणिनि आदि ऋषियों ने कहां ऐसा

लिखा है कि "मन्त्र संहिता ही वेद है" ब्राह्मण वेद नहीं है वरन पाणिनि ने तो जहां मन्त्र और ब्राह्मण दोनों के लेने का प्रयोजन देखा स्पष्ट "छंदसि" कहा अर्थात् वेद में अर्थात् मन्त्र और ब्राह्मण दोनों में और जहां केवल मन्त्र वा ब्राह्मण को देखा "मन्त्रे" वा "ब्राह्मणे" कहा और जहां मन्त्र और ब्राह्मण अर्थात् वेद के सिवाय देखा वहां "भाषायाम्" कहा भला जैमिनि महर्षि के पूर्व मीमांसा को तो स्वामी जी महाराज मानते हैं उस में इन सूत्रोंका अर्थ क्यों कर लगावेंगे "तच्चोदकेषु मन्त्राख्या" "शेषे ब्राह्मणशब्दः" (अ० २ पा० १ सू० ३३) इस का अर्थ बहुत स्पष्ट है कि वेद का मन्त्रों से अवशिष्ट जो भाग सो ब्राह्मण निदान जब मैंने गौतम और कणाद के तर्क और न्याय से न अपने प्रश्न का प्रामाणिक उत्तर पाया और न स्वामी जी महाराज की वाक्य रचना का उस से कुछ सम्बन्ध देखा डरा कि कहीं स्वामी जी महाराज ने किसी मेम अथवा साहिबसे कोई नया तर्क और न्याय रूस अमरिका अथवा और किसी दूसरी विलायत का न सीख लिया हो फरंगिस्तान के विद्वज्जनमण्डलीभूषण काशिराजस्थापित पाठशालाध्यक्ष डाक्टर टीबो साहिब बहादुर को दिखलाया बहुत अचरज में आये और कहने लगे कि हम तो स्वामी जी महाराज को बड़ा पण्डित जानते थे पर

अब उन के मनुष्य होने में भी संदेह होता है ( तब तो भ्रमोच्छेदन को भ्रमोत्पादन कहना चाहिये ! ) और अंगरेजी में कुछ लिख भी दिया नीचे उस की भाषा सहित छापा जाता है—

The question at issue between Raja Sivaprasad and Dayanand Sarassvati is the authoritativeness of the several parts of what is commonly comprised under the name "Veda." Dayanand Sarassvati rejects the Brahmanas and Upnishads [with one exception ] and acknowledges the authority of the Sanhitas only. As this procedure is not in agreement with the religious belief of the Hindus of the present day as well as of past ages of which we have records, Dayanand Sarassvati is bound to produce convincing proofs for the validity of the distinction he makes. He mentions that the Sanhitas are "ईश्वरोक्त" while the Brahmanas and Upnishads are merely "जीवोक्त"; but how does he prove this assertion? (for as it stands it cannot be called anything but a mere assertion). The assertion of the Sanhitas being स्वतःप्रमाण while the Brahmanas and Upnishads are merely परतःप्रमाण can likewise not be admitted before it is supported by arguments stronger than those which Dayanand Sarassvati has brought forward up to the present. Raja Sivaprasad is right to ask "why should not both be स्वतःप्रमाण if one is so ?" or again "why should not both be परतःप्रमाण if one is so ?" and this reasoning could certainly not be employed by any one for proving that other non-vedic books as well are to be considered equal to the Veda; for the Veda alone [including Brahmanas and Upnishads] enjoys the privilege of having—since immemorial times—been acknowledged by all Hindus as sacred and revealed books.

With regard to the passage quoted by Dayanand Sarassvat from the Satapatha Brahmana ( Brihadaranyaka Upanishad ) it must be admitted that the objection of Raja Sivaprasad is well-founded; if one part of the

passage is authoritative, the other part is so likewise. The assertion whether the whole passage is a वाक्य or a वाक्य समूह is wholly irrelevant to the point at issue.

Dayanand Sarassvati has certainly no right to declare the passage from Katyayana—according to which the Veda consists of Mantra and Brahmana—oninterpolation. Acting in this way anybody might declare any passage contrary to his pre-conceived opinions an interpolation.

Dayanand Sarassvati rejects the authority of the Brahmanas. How then does he prepare to deal with Brahmana portions of the Taittiriya Sanhita, which in character nowise differ from other Brahmanas, like the Satapatha, Panchavinsa, &c. And on the other hand does he reject all the mantras contained in the Taittiriya Brahmana?

G. THIBAUT.

(भाषा) "राजा शिवप्रसाद औ दयानन्द सरस्वती में जो विवाद उपस्थित है उसका निचोड़ यह है कि "वेद" नाम से प्रसिद्ध ग्रन्थों के कौन भाग प्रमाण और कौन अप्रमाण हैं। दयानन्दसरस्वती सिवाय एक उपनिषद् के ब्राह्मण औ उपनिषद् ग्रन्थों को छोड़ देते हैं और केवल संहिताओं को प्रमाण मानते हैं। यह रीति न आज कलके हिन्दुओं के मतानुसार है, न अतीतकालों के आर्य्यों के मत से, जिनका लेख हमको मिलता है, अनुकूल है। इस कारणसे दयानन्द सरस्वती को अवश्य उचित है कि बलवत् प्रमाण देवें जिस से उन के अभिमत भेद की सिद्धि हो। वे कहते हैं कि संहिता "ईश्वरोक्त" हैं और ब्राह्मण और उपनिषद्

केवल "जीवोक्त" । परन्तु इस बात का प्रमाण क्या देते हैं ? अब तक उन्होंने दन्तकथा ही केवल कह रक्खी है, संहिता मात्र का स्वतः प्रमाण होना और ब्राह्मण औ उपनिषद् वाक्यों का निरा परतः प्रमाण होना तभी माना जासक्ता है जब दयानन्द सरस्वती दृढ़तर युक्ति देवें । आज तक जो युक्तियां दी हैं उनसे कुछ भी सिद्ध नहीं होता है । राजा शिवप्रसाद का यह पूछना न्याय्य है कि "यदि एक स्वतः प्रमाण है तो दोनों क्यों न हों" अथवा "यदि एक परतः प्रमाण है तो दोनों क्यों न हों" और यह तो कभी युक्ति युक्त हो ही नहीं सक्ता कि वेदभिन्न पुस्तकों को भी कोई इसी रीति से कह दे कि वे भी वेद के समान हैं क्योंकि केवल वेदही को ( ब्राह्मण औ उपनिषदों के सहित ) अनादि काल से ( since immemorial times अर्थात् इतने प्राचीन काल से कि जिसका ठिकाना कोई नहीं बता सक्ता ) सब आर्य्य लोग अपने धर्म्म का मूल ग्रन्थ और परमेश्वर की वाणी मानते रहे हैं ।

दयानन्द सरस्वती ने शतपथ ब्राह्मण ( बृहदारण्यक उपनिषद् ) से जो वचन उद्धार किया है उस पर तो इस बात का अवश्य स्वीकार करना उचित है कि राजा शिवप्रसाद की विप्रतिपत्ति अर्थात् दूषण सयुक्तिक है उस वाक्य का एक भाग यदि प्रमाण

हो दूसरा भाग भी अवश्य प्रमाण है। वह वाक्य एक है अथवा वाक्य समूह है इस की चर्चा प्रकृत विषय से कुछ सम्बन्ध नहीं रखती।

निःसन्देह दयानन्द सरस्वती को अधिकार नहीं कि कात्यायन के उस वाक्य को प्रक्षिप्त बतावें जिस के अनुसार मन्त्र औ ब्राह्मण का नाम वेद सिद्ध होता है। ऐसे तो जो जिस किसी वचन को चाहे अपने अविवेक कल्पित मत से विरुद्ध पाकर प्रक्षिप्त कहदे।

दयानन्द सरस्वती ब्राह्मण ग्रन्थों की प्रमाणता नहीं मानते तो तैत्तिरीय संहिता के ब्राह्मण भागों को क्या कहेंगे। इन ब्राह्मण भागों में और शतपथ पञ्चविंश आदि ब्राह्मण में कुछ भी अन्तर नहीं है। और फिर तैत्तिरीय ब्राह्मण के जो मन्त्र हैं क्या उन सब को भी छोड़ देंगे?"

यहां इस के लिखने की आवश्यकता नहीं कि स्वामीजी महाराज जो लिखते हैं कि "वेदों (संहिता) में इतिहास होते तो वेद आदि और सब से प्राचीन नहीं होसके + + इस लिये + + जमदग्नि आदि शब्दों से चक्षु आदि ही अर्थों का ग्रहण करना योग्य है" (अ० पृष्ठ १६) सो मेरा अभिप्राय तो इतना ही है कि यदि ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार जमदग्नि आदि का अर्थ योंही माना जावे तो संहिता

के समान ब्राह्मण को भी वेद भाग अथवा मान-नीय मानने में उन्हीं ब्राह्मण ग्रंथों की युक्तियां क्यों न मानी जावें और स्वामीजी महाराज यह जो लिखते हैं कि वेदों में "परा विद्या न होती केन आदि उपनिषदों में कहां से आती" ( अ० पृष्ठ १८ ) सो यहां भी मेरा अभिप्राय तो इतना ही है कि वेद के नाम से मंत्र भाग अर्थात् संहिता और ब्राह्मणों को मान कर जहां वेदों को अपरा कहा जाय वहां मंत्र और ब्राह्मणों का कर्म्म काण्ड और जहां वेदों को परा कहा जाय वहां मंत्र और ब्राह्मणों का ज्ञान काण्ड मानना चाहिये और ऐसाही आज तक वैदिक हिन्दू परम्परा से मानते चले आये हैं अधिक जो कुछ स्वामीजी महाराज ने लिखा है वा आगे लिखें उस का तत्त्व पंडित लोग आप बूझ लेंगे हम फिर भी हाथ जोड़ कर स्वामीजी महाराज के चरणों में विनय पूर्वक विनती करते हैं कि आप एक क्षण-मात्र पक्षपात और क्रोध रहित होकर सोचिये और सत्य को हाथ से न दीजिये सत्यमेव जयति नानृतं और मुझे तो यदि एक भी दयानन्दी के चित्त में यह बात जम जायगी कि स्वामीजी महाराज का आदेश विधाता का लेख अर्थात् पोप की तरह इनफ़ेलिबूल ( infallible ) नहीं है अपनी बुद्धि काम में लानी चाहिये और दूसरे पंडितों की भी सुननी

चाहिये सनातन धर्म को अथवा जो बात परम्परा से चली आयी है एकाकी किसी एक के कहने सुनने से बेसमझे बूझे न छोड़ देनी चाहिये मैं कृतकृत्य और अपना सारा परिश्रम सफल समझूंगा ॥

निदान अब मैं इन सब बातों को एक ओर रख कर जो इस २२ पृष्ठ के भ्रमोच्छेदन में स्वामीजी महाराज का अभीष्ट खोजता हूं तो आदि से अंत तक यही अभीष्ट पाता हूं—यही अभीष्ट है यही अभिप्राय है यही कामना है यही इच्छा है यही ईप्सा है यही लालसा है—कि एक बार श्रीमत् पंडितवर धुरन्धर अज्ञानतिमिरनाशनैकभास्कर बाल शास्त्री जी महाराज स्वामीजी महाराज के साथ शास्त्रार्थ स्वीकार करलें सज्जन पुरुषों का स्वभावही है कि याचकों की याचना पूरी करने में उद्योग करें मैं शास्त्रीजी महाराज के चरणों में पहुंचा और भ्रमोच्छेदन दिखलाया आज्ञाकी:—

कि "भला आप के (शिवप्रसाद के) एक सहज से प्रश्न का तो उत्तर श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से कुछ बना ही नहीं उत्तर के बदले दुर्वचनों की वृष्टि की यदि काशी के पण्डित उनसे शास्त्रार्थ करने को उद्यत भी हों उत्तर के स्थान में उन्हें वैसीही दुर्वचन पुष्पाञ्जलि का लाभ होगा इस से अतिरिक्त और कुछ भी सार उस में से नहीं निकलेगा सिवाय

इस के संवत् १६२६ में यहां दुर्गाजी पर आनन्द-बाग़में श्रीमन्महाराजाधिराज द्विजराज श्री ५ काशी-नरेश महाराज प्रभृति प्रायः सब काशी के मान्य प्रतिष्ठित और विद्वज्जनों के समाज में जो कुछ शास्त्रार्थ हुवा था उसी को उक्त स्वामीजी नहीं मानते तो अब आगे उन से क्या आशा है" ॥

निदान स्वामीजी महाराज से तो अब काशी के पंडित लोग फिर शास्त्रार्थ करते नहीं दिखलायी देते किन्तु स्वामीजी महाराज यदि अपने किसी गुरु को आगे खड़ा करके शास्त्रार्थ करना चाहें तो क्या आश्चर्य है कि फिर भी यहां के पंडित लोग बद्धपरिकर हो जावें हां बाबू रामकृष्णजी ने जो अबोध निवारण ग्रंथ छपवाया है ऐसे ऐसे ग्रंथ स्वामीजी महाराज अपना जी बहलाने को चाहे जितने ले लेवें ॥

॥ इति ॥